डॉ॰ ओम प्रकाश आर्य
महाराजा कॉलेज, आरा

बी॰ए॰ स्नातक सेमेस्टर – V
विषय – संस्कृत, MJC – VIII

तर्क संग्रह पदार्थ विवेचन

उपनिषदों में 'आत्मा' के ज्ञान के द्वारा मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह सर्वत्र प्रतिपादित किया गया है उसी प्रकार वैशेषिक मत में पदार्थों के ज्ञान से मोक्ष प्राप्तव्य है। न्याय-वैशेषिक मत में समस्त जगत् का मूल तत्व सप्त पदार्थ है। 'पदार्थ' शब्द का व्याकरणिक अर्थ पद = शब्द का अर्थ पदार्थ है। 'पद' या 'शब्द' से वस्तु का बोध होता है अतः 'शब्द' पद है और 'वस्तु' उसका अर्थ– 'पद्यते गम्यतेऽर्थोऽनेनेति शब्दः पदम्'। शब्द के द्वारा वस्तु = पदार्थ का अभिधान होता है, अतः वह अभिधेय भी कहलाता है – 'अभिधेयत्वं पदार्थ-सामान्यलक्षणम्' अर्थ उसे कहते हैं जिसके प्रति इन्द्रियाँ गतिशील हो – 'ऋच्छन्तीन्द्रियाणि यं सः'।

पदार्थों की संख्या प्रत्येक दर्शन में पृथक् मानी गयी है – अरस्तू ने अपने तर्कशास्त्र में दस पदार्थ माने हैं। न्याय ने सोलह, वैशेषिक ने सात तथा सांख्य 25 तत्त्व मानता है। अन्नम्भट्ट ने ग्रन्थ के अन्त में कहा है कि अन्य शास्त्रों में जो पदार्थ बतलाये हैं, उन सबका अन्तर्भाव वैशेषिक के सात पदार्थों में हो जाता है।

'द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाभावाः पदार्थाः सप्तैव'। वैशेषिक दर्शन के अनुसार- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य (जाति) विशेष, समवाय और अभाव - ये सप्त पदार्थ हैं।

1. द्रव्य –

सप्त पदार्थों में पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन ये नव द्रव्य हैं 'तत्र द्रव्याणि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नवैव'।

'द्रव्य' शब्द गत्यर्थक 'द्रु' से कर्म अर्थ में निष्पन्न है - 'द्रूयते = गम्यते आश्रयभावाय गुणा- दिभि: इति द्रव्यम्'। अर्थात् आश्रयार्थ गुण आदि पदार्थ जिसको चाहते हैं, वह द्रव्य पदार्थ है। द्रव्य में गुण पदार्थ समवाय सम्बन्ध से रहता है। कर्म आदि नित्य नहीं रहते। अतः जिस पदार्थ में गुण समवाय = नित्य सम्बन्ध से रहता है, वह पदार्थ द्रव्य है, किन्तु नैयायिकों के मत में 'आद्ये क्षणे निर्गुणं द्रव्यं तिष्ठति'। अर्थात् द्रव्य अपनी उत्पत्ति के प्रथम क्षण में गुण रहित रहता है, द्वितीय क्षण में उसमें गुण आता है। अतः गुण द्रव्य में समवाय सम्बन्ध से नहीं रह सकता। किन्तु उसमें द्रव्यत्व जाति अवश्य होती है। अतः जहाँ गुण निवास करता है वहीं पर निवास करने वाली सत्ता से भिन्न जाति जहाँ विद्यमान है, वह द्रव्य है।

2. गुण -

रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, और संस्कार - ये चौबीस गुण हैं। द्रव्य से और कर्म से भिन्न होने पर जिसमें जाति विद्यमान है, वह पदार्थ गुण कहलाता है। नैयायिकों के अनुसार जाति द्रव्य, गुण और कर्म में रहती है। अर्थात् द्रव्यावृत्ति-नित्य वृत्ति-जातिमान्। अर्थात् जो न द्रव्य है और न अनित्य और जातिमान भी है वह 'गुण' है। यहाँ 'नित्य' शब्द से कर्म का निराकरण हो जाता है। भाषा-परिच्छेद के अनुसार गुण की परिभाषा है -

'अनाश्रयाः द्रव्याश्रिता ज्ञेया निर्गुणा निष्क्रिया गुणाः' अर्थात् गुण द्रव्य में रहते हैं किन्तु स्वयं गुण और क्रिया रहित होते हैं। इसी प्रकार की परिभाषा कणाद ने गुण की की है - 'द्रव्याश्रयी न गुणवान् संयोगविभागेष्वकारणमनपेक्ष इति गुणलक्षणम्'।

3. **कर्म** -

उत्क्षेपण (उछालना), अवक्षेपण (नीचे डालना), आकुञ्चन (समेटना), प्रसारण (फैलाना) और गमन (जाना) ये पाँच कर्म हैं - 'उत्क्षेपणावक्षेपणाकुञ्चन-प्रसारणगमनानि पञ्च कर्माणि'।

4. **सामान्य** -

पर एवं अपर दो प्रकार का सामान्य है 'परमपरं चेति द्विविधम् सामान्यम्'। जिनके उदाहरण क्रमशः सत्ता और द्रव्यत्व है किन्तु यह पर और अपर सापेक्ष है। सत्ता की अपेक्षा द्रव्यत्व 'अपर' है और घटत्व की अपेक्षा द्रव्यत्व 'पर' है।

5. **विशेष** -

नित्य द्रव्यों में रहने वाले विशेष तो असंख्य ही हैं- 'नित्यद्रव्यवृत्तयो विशेषास्त्वनन्ता एव'। विशेष वह है जो नित्य पदार्थों में रहता है और उन्हें एक दूसरे से पृथक् करता है। प्रत्येक नित्य पदार्थ के अपने-अपने पृथक् विशेष होने से वह अनन्त होते हैं। विशेष की अन्य परिभाषाएँ हैं- 'स्वतो व्यावर्तकत्वम्' अर्थात् जो स्व को स्व से पृथक् करे। 'जातिरहितत्वे सति नित्यद्रव्यमात्रवृत्तिः', 'एकमात्रसमवेतत्वे सति सामान्यशून्यः' तथा 'अत्यन्तव्यावृत्तिः'। जिनका भावार्थ है- एक नित्य पदार्थ को दूसरे

नित्य पदार्थ से पृथक् करने के लिए विशेष को भी पदार्थ मानना आवश्यक है।

6. समवाय –

समवाय तो एक ही है– 'समवायस्तेक एव'। समवाय का तात्पर्य है घनिष्ठ सम्बन्ध जो उन दो वस्तुओं में रहता है जिनका सम्बन्ध बिना उन दोनों वस्तुओं को नष्ट किये नष्ट नहीं किया जा सकता। 'समवाय' उन दो पदार्थों में, जो सदा अविभक्त रहते हैं, रहने वाला नित्य सम्बन्ध है।

7. अभाव –

अभाव चार प्रकार का होता है – प्रागभाव (पहले न होना), प्रध्वंसाभाव (नष्ट हो जाने के कारण न रहना), अत्यन्ताभाव (बिलुल न होना), और अन्योन्याभाव (एक का दूसरे में न होना) अभावश्चतुर्विधः प्रागभावः प्रध्वंसाभावोऽत्यन्ताभावोऽन्योन्याभावश्चेति।